संस्कृत साहित्यकार महिलाएं

देवर्षि कलानाथ शास्त्री
(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

यह तो सुविदित ही है कि मध्यकाल में जिस प्रकार महिलाओं को वेदाध्ययन के अधिकार के उपयुक्त नहीं माना गया उस प्रकार की स्थिति वेदकाल में नहीं थी। उन्हें वेदाध्ययन का ही नहीं गुरुकुल चलाने तक का अधिकार था। वेदकाल में महिलाओं को समान अधिकार और समान आदर भारत में दिया जाता था वैसे इसके लिए मनु का **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते** आदि तथा अन्य श्लोक उद्धृत किए ही जाते हैं। वैसे इस कटुसत्य को नकारा नहीं जा सकता कि कुछ कालखण्ड ऐसे रहे जिनमें अन्य अनेक देशों की तरह भारत में भी महिलाओं को समान अधिकार या पुरुषों के समान आदर प्राप्त नहीं था। कुछ युग तो ऐसे आये थे जब उन्हें दूसरे दर्जे का नागरिक माना जाता था, दूसरे शब्दों में पुरुषों के अधीनस्थ नागरिक के रूप में देखा जाता था और कुछ समय ऐसे भी आये जब उन्हें एक सम्पत्ति का दर्जा दे दिया गया था जिसका स्वामी पुरुष होता था। **न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति** कहकर बचपन से बुढ़ापे तक के लिए पुरुष की छत्रछाया का आवश्यक बताया जाना इसी अवधारणा का प्रमाण है।

इस सबके बावजूद यह भी सत्य है कि वेदकाल से लेकर अब तक उपर्युक्त वातावरण और स्थितियों के बावजूद अनेक महिलाएं न केवल अद्भुत विद्वत्ता की धनी रही थी बल्कि शास्त्रों और काव्यों के लेखन द्वारा उन्होंने कालजयी साहित्य की रचना भी की थी। वेदकाल में गार्गी वाचक्नवी, अपाला आत्रेयी, घोषा काक्षीवती और मैत्रेयी आदि ब्रह्मवादिनी महिलाओं का नाम तो हम लेते ही रहे हैं, व्याकरण में यह प्रयोग कि **आचार्य की पत्नी तो आचार्यणी** कहलाएगी पर स्वयं गुरु हो तो **आचार्या**। यह सिद्ध करता है कि महिलाएं आचार्या भी होती थी। मण्डन मिश्र और शंकराचार्य के शास्त्रार्थ में मध्यस्थ बनने वाली मण्डन की विदुषी पत्नी **भारती** का नाम भी सुविदित है।

इसके अतिरिक्त यह भी कहा जाता है कि **लीलावती** भास्कराचार्य की विदुषी कन्या थी। इस बारे में तो अब भ्रम दूर हो गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि लीलावती उनकी कन्या नहीं थी बल्कि उन्होने अपनी प्रतिभा को ही यह नाम दिया था। हमारा यह अनुमान है कि परवर्ती महिला साहित्यकारों के जो नाम गिनाये जाते हैं उनमें से भी कुछ तो इसी प्रकार मिथको के रूप में ही चल पड़ी हैं, कुछ अवश्य वास्तविक हैं। इस दृष्टि से यहां काव्य रचना करने वाली कुछ महिला साहित्यकारों का विवरण संकेत के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

विज्जिका

वेदों और उपनिषदों के युग के बाद विदुषियों के नाम बहुत कम मिलते हैं। गत दो हजार वर्षों में कुछ महिलाओं के नाम से लिखे गये काव्य और पद्य अवश्य मिलते हैं जिनमें कुछ निश्चित ही अद्भुत प्रतिभा से सम्पन्न कृतियां हैं। इनमें प्रमुख नाम हैं- **विजयांका** जिसे **विज्जिका** भी पुकारा जाता था। इस कवयित्री की ऐतिहासिकता का उल्लेख जगह-जगह मिलता है। इतिहाकारों में से कुछ ने इसका समय ईसा की ७वीं सदी ६६०ई. बताया है और कुछ ने ई. ८५० से पूर्व। सभी के मत में इसका काल इन दो तिथियों के बीच पड़ता है। संभवतः विजया, कर्नाटक के चालुक्य वंश के पुलकेशी द्वितीय के पुत्र चन्द्रादित्य की पत्नी विजया भट्टारिका थी। इसकी प्रशंसा बहुत से कवियों ने की है। जल्हण की सूक्ति मुक्तावली में यह पद्य आता है-

सरस्वतीयं कार्णाटी विजयांका जयत्यसौ।
या वैदर्भगिरां वासः कालिदासादनन्तरम् ।।

एक पद्य **शार्ङ्गधरपद्धति** में उपलब्ध है जिसमें विजया यह कहती है कि आचार्य दण्डी ने सरस्वती को सफेद रंग की कैसे बता दिया जब कि कालेरंग की जीती जागती सरस्वती मैं बैठी हूं।

नीलोत्पलदलश्यामां विज्जिकां मामजानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्तां सर्वशुक्ला सरस्वती ।।

इसी ने एक अन्य पद्य में यह कहा है कि **ब्रह्मा, वाल्मिकी और व्यास के बाद यदि कोई वन्दनीय कवि हुए है तो वह मैं हूं।** इसमें कोई सन्देह नहीं कि विजया की रचनाएं **अभिधावृत्तमातृका** आदि ग्रन्थों में मुकुलभट्ट आदि ने उद्धृत की है, मम्मट्ट ने भी उद्धृत की है और वे अद्भुत चमत्कार वाली रचनाएं हैं। इनकी विशेषता यह है कि इनमें नारी हृदय की कोमल भावनाएं इतनी सहजता के साथ वर्णित है कि रसनिष्पत्ति में समय नहीं लगता। एक विरहिणी वर्षा काल में विरह वेदना को असहनीय पाती हुई कहती है कि मुझे मार डालने के लिए बादल, बूंदे, बिजली, कोहरा,

हरियाली इनमें से कोई एक भी पर्याप्त होता, पर देखिये एक नन्ही सी जान के लिए सबने मिलकर एक साथ हमला किया है।

मेधैर्योम नवाम्बुभिर्वसुमती विद्युल्लताभिर्दिशो
धाराभिर्गमनं वनानि कुटजैः पूरैर्वृता निम्नगाः।
एकां घातयितुं वियोगविधुरां दीनावकाकीं स्त्रियम्
प्रावृट्काल हताश वर्णय कृतं मिथ्या किमाडम्बरम् ।।

एक अन्य पद्य में वह कहती है कि बादल, वायु और मयूर ने उस पर क्रूरता बरती है। वह तो समझ में आती है पर बिजली नारी होते हुए भी उस पर अकरूण क्यों है? यह उद्गार हृदय से निकला सा लगता हैं

सोत्साहा नववारिभारगुरवो मुञ्चन्तु नादं घनाः
वाता वान्तु कदम्बरेणुशबला नृत्यन्त्वमी बर्हिणः।
मग्नां कान्तवियोगदुः खजलधौ दीनां विलोक्याङ्गनाम्
विद्युत् प्रस्फुरसि त्वमप्यकरुणा स्त्रत्वेऽपि तुल्ये सति ।।

इस कवयित्री के अनेक पद्य उत्कृष्ट श्रृंगार के उदाहरण के रूप में लक्षण काव्यों में उद्धृत मिलते हैं। उनका प्रतिभा चमत्कार देखते ही बनता है। कुछ ऐसे है जिनमें पर पुरुष के प्रेम का हवाला बड़े चटखारे के साथ दिया गया है। कहा नहीं जा सकता कि स्वयं कवयित्री ने ऐसे पद्य बनाये होंगे या किसी अन्य मनचले या प्रतिभाशाली कवि से बनाकर उन्हें विजया के नाम से प्रसिद्ध कर दिया। यह अवश्य खेद की बात है कि इसका लिखा कोई ग्रन्थ या काव्य नहीं मिलता। लगता है इतनी अद्भुत प्रतिभा ने ग्रन्थ के रूप में भी कुछ अवदान अवश्य छोड़ा होगा किन्तु आज वह उपलब्ध नहीं है।

गंगादेवी

एक अन्य कवयित्री का पता भी चलता है जिसका नाम गंगादेवी था और जो कर्नाटक की महारानी थी। यह विजयनगर साम्राज्य के सम्राट विरूपाक्ष के पुत्र कम्पराज की महारानी थी। इसका लिखा **मधुराविजय** काव्य मिलता है जिसमें उसने अपने पति की विजय यात्रा का वर्णन किया है। यह प्रसिद्ध है कि यह रानी महारानी झांसी की तरह स्वयं भी योद्धा थी और तलवार लेकर आक्रान्ता विपक्षियों से लड़ी थी। इसका समय मुगलकाल में सन् १३८० के आस-पास प्रतीत होता है। इस काव्य की अधूरी पाण्डुलिपियां प्राप्त हुई थी जिनमें से एक तो मद्रास से और दूसरी कर्नाटक से

प्रकाशित हुई बताई। इसने एक पद्य में इस स्थिति पर करारी चोट की है कि यवनों के घर के जो तोते फारसी सीख जाते हैं उनकी बजाए कड़वी किन्तु अपनी भाषा बोलने वाले उल्लू कहीं बेहतर हैं।

न तथा कटुघूत्कृताद् व्यथा मे हृदि जीर्णोपवनेषु घूकलोकात्।
परिशीलितपारसीकवाग्भ्यो यवनानां भवने यथा शुकेभ्यः ॥

तिरुमलाम्बा

एक अन्य कवियत्री भी बहुत महत्त्वपूर्ण है जिसका लिखा महाकाव्य संस्कृत साहित्य में सुप्रसिद्ध है। यह भी विजयनगर साम्राज्य की महारानी थी। वहां के प्रसिद्ध सम्राट **कृष्णदेवराय** के छोटे भाई **अच्युतराय** की रानी तिरुमलाम्बा (१६वीं सदी में) का लिखा हुआ **वरदाम्बिकापरिणय** नाम का चम्पू काव्य इतिहास में प्रसिद्ध है जो वर्षों तक पाठ्यपुस्तक के रूप में भी रखा गया था। यह तंजोर से प्रथमतः प्रकाशित हुआ था और बाद में गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी और हरिदत्त शर्मा की टीका सहित लाहौर से मोतीलाल बनारसीदास ने मुम्बई संस्कृत प्रेस से भी छपवाया था। इसमें तत्कालीन इतिहास वर्णित है। वरदराज के साथ अम्बिका के विवाह इतिहास का विवरण देते हुए इसमें बहुत सुन्दर गद्यशैली में कथोपकथन मिलते हैं और सुललित पद्य भी पाये जाते हैं। कथानक के सौन्दर्य के साथ-साथ शैली का सौन्दर्य इसकी विशेषता है।

इस विवरण से यह स्पष्ट होगा कि दक्षिण, विशेषतः कर्नाटक के राज घरानों में विपुल संख्या में संस्कृत की विदुषियों और कवयित्रियों के पाये जाने का प्रमुख कारण है वहां महिलाओं के उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक अधिकार और आदर की परम्परा का होना। एक अन्य कारण यह भी है कि विजय नगर जैसे समृद्ध साम्राज्य में शिक्षा की विशेषकर महिलाओं में संस्कृत शिक्षा की परम्परा उन दिनों जीवित थी।

शीलाभट्टारिका

एक अन्य प्रसिद्ध कवयित्री का नाम उतना ही बहुचर्चित है। यह हैं शीलाभट्टारिका, राजशेखर ने लिखा है कि पांचाली रीति के उदाहरण शीलाभट्टारिका के पद्य है **शीलाभट्टारिका-वाचि बाणोक्तिषु च सा यदि।** इस प्रकार यह मान्यता थी कि वैदर्भी रीति के उत्कृष्ट उदाहरण जिस प्रकार विजया के पद्य है उसी प्रकार पांचाली रीति के उदाहरण हैं, शीलाभट्टारिका के पद्य। राजानक रूय्यक ने तथा मम्मट ने काव्य प्रकाश में इसके पद्यों को उत्तम काव्य के उदाहरण के रूप में उद्धृत किया है। इतनी प्रसिद्ध कवयित्री होने के बावजूद इसके जीवन परिचय का विवरण प्राप्त नहीं होता है। वैसे किंवदन्तियां अनेक प्रसिद्ध हैं जिनमें एक यह भी है कि राजा भोज के समय ये थी और उस समय भोज ने

एक पद्य के दो चरण बनाये जिसके जवाब में इन्होंने अन्तिम दो चरण बनाकर उसे पूरा किया। यदि ऐसा है तो इसका समय ११वीं सदी सिद्ध होता है किन्तु ऐसी कथाओं की कोई प्रामाणिकता नहीं है।

वैसे हमारा यह विचार है कि महिलाओं के द्वारा लिखे गये श्रृंगार के पद्यों में भी लोग अनेक शंकाएं करते हैं, फिर यदि उग्रश्रृंगार के पद्य हों या मनचली स्त्रियों के परपुरुष से प्रेम का वर्णन उनमें किया जाए तो कितनी आलोचना की आशंका हो सकती है। इस दृष्टि से कुछ ऐसे पद्य जिनके लेखक का निश्चय नहीं है और जिन्हें किसी कवयित्री के नाम से प्रसिद्ध कर दिया गया है इस बात की गुंजाइश छोड़ते हैं कि यह खोजबीन की जाए कि क्या वे सचमुच उसी महिला द्वारा लिखे गये थे ? किन्तु शीलाभट्टारिका के ५ पद्य ऐसे मिलते हैं जिन्हें स्थान-स्थान पर उसी के नाम से उद्धृत किया गया है। इसलिए उनके रचयिता के बारे में सन्देह नहीं है। यह अवश्य है कि उनका विषय इतना साहसपूर्ण है कि किसी पुरुष को भी इतना उग्र श्रृंगार लिखने में हिचकिचाहट होगी, महिला की तो बात ही क्या है। इसमें से एक पद्य सुप्रसिद्ध है। **यः कौमारहरः।** इसमें अच्छे भले घर की एक विवाहिता युवती छिपकर अपने प्रिय से नर्मदा के तीर पर मिलना चाहती है। बेचारे साहित्य के अध्यापकों को इसका यह अर्थ करना पड़ता है कि प्रिय के रूप में उसका तात्पर्य ही अपने पति से ही है। इसका समाधान तो यों हो जाता है किन्तु अन्य पद्यों में भी ऐसे वर्णन हैं जहां नायिका अपने प्रिय के पास दूती को भेजती है किन्तु दूती उसी से प्रेमलीला रचाने लगती है और उस पर कभी तो नायिका उसे उलाहना देती है, कभी ताना देती है। इनके लिखने में जो साहस आवश्यक है वह इस कवयित्री में था यह तो मानना ही पड़ता है।

हम यह इस दृष्टि से लिख रहे हैं कि कभी कभी रसिक कवियों को इस बात में भी आनन्द आता है कि किसी महिला के नाम से श्रृंगार के पद्य प्रसारित कर दें। ऐसी स्थितियों में हमें सतर्कता से काम लेना होगा। इसका एक उदाहरण है एक कवयित्री का नाम जिसे **विकटनितम्बा** कहा जाता है। इसके भी श्रृंगार के पद्य जगह-जगह मिलते हैं किन्तु कोई महिला इस तरह अपना नाम और ऐसे पद्य लिखे जैसे -

अन्यासु तावदुपमर्दसहासु भृङ्ग
लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु।
बालामजातरजसं कलिकामकाले
व्यर्थं कदर्थयसि किं नवमल्लिकायाः ॥

यह कहां तक संभव है? इसमें कोई सखी भौंरे पर डालकर नायक से कह रही है कि अभी अवयस्क कन्या में मन न फंसाओ। इस कवयित्री का नाम और पद्य किसी और के हो सकते हैं। हमारे इस अनुमान का एक आधार भी है कि

कुछ विद्वानों ने एक पद्य **कान्ते तल्पमुपागते** इसका लिखा बताया है जब कि यह अमरुशतक में मिलता हैं इस सम्बन्ध में गहरा अनुसंधान आवश्यक है।

अन्य नाम

उपर्युक्त कवयित्रियों के अतिरिक्त १०-१५ अन्य नाम भी प्रसिद्ध हैं। धनददेव का एक पद्य शार्ङ्गधरपद्धति में मिलता है।

शार्ङ्गधरपद्धतो धनददेवः तौ
शीलाविज्जामारुलामोरिकाद्याः काव्यं कर्तुं सन्ति विज्ञाःस्त्रियोऽपि।
विद्यां वेत्तुं वादिनो निर्विजेतुं विश्वं वक्तुं यः प्रवीणः स वन्द्यः ।।

इससे प्रतीत होता है कि शीलाभट्टारिका और विज्जिका के अलावा मारुला, मोरिका, आदि महिलाएं काव्य लिखती थीं। उनके लिखे पद्य भी जगह जगह मिलते हैं। इसमें प्रियंवदा, विद्या, गौरी, कुटला, मधुरवाणी, मारुला, फल्गुहस्तिनी, मोरिका, पद्मावती, सीता, सरस्वती, इन्दुलेखा और भावक देवी के पद्य **मधुरभाषी** के सम्पादक श्री श्रीनिवासाचार्य ने विभिन्न ग्रंथों से जहां वे उदाहरण के रूप में लिखें गयें हैं, उद्धृत किये हैं। निःसंदेह ये सभी पद्य उत्कृष्ट काव्य के उदाहरण हैं। श्रीनिवासाचार्य जी ने एक अन्य कवयित्री का नाम जचनचपला बताया है और उसका यह पद्य भी उद्धृत किया है।

दुर्दिननिशीथपवने निस्संचारासु नगरवीथीषु।
पत्यो विदेशयाते परसुखजघनचपलायाः ।।

इस पद्य को और लेखिका के नाम को देखकर भी वही सन्देह उत्पन्न होता है जो विकटनितम्बा के सम्बन्ध पर संकेतित है। कोई महिला अपना ऐसा नाम रखे और ऐसा पद्य लिखे आप विश्वास करेंगें? फिर भी ऐसे कुछ नामों को छोड़ भी दें तो दक्षिण भारत से ही मधुरवाणी, रामभद्राम्बा, राजम्मा चिन्नम्मा, नागम्मा आदि तथा उत्तरी भारत की लक्ष्मी ठाकुरानी, ग्रन्थदीपिका, केरली, मदालसा, मदिरेक्षणा, सुभद्रा, सरस्वती देवकुमारिका, रमादेवी इत्यादि बहुत से नाम हैं जिनकी रचनाओं का पता लगाकर उन पर विमर्श करना अनेक नये आयाम खोल सकता है।

गत ३-४ शताब्दियों में ऐसी कितनी महिलाएं हुई उनके बारे में उल्लेख तो मिलते हैं, पूरी जानकारी नहीं मिलती किन्तु इस शताब्दी के प्रारम्भ में पंडिता क्षमाराव जैसी उद्भट कवयित्री हुई, जिनका कृतित्त्व भारत भर में

विख्यात है। पंडिता क्षमाराव की विशेषता यह थी कि उसने गांधीजी के सत्याग्रह आन्दोलन का पूरा समर्थन ऐसे समय में किया जब इस हेतु साहस की बहुत बड़ी आवश्यकता रहती थी। स्वतंत्रता के बाद तो गांधीजी पर लिखने वाले बहुत से पैदा हो गये किन्तु बीसवीं सदी के तीसरे दशक से लेकर चौथे तक क्षमाजी ने **सत्याग्रहगीता** (पेरिस १९३२), **उत्तरसत्याग्रहगीता** (१९४९), और स्वराज्य विजय जैसे काव्य गांधीजी पर लिखे जिनमें स्वतंत्रता आंदोलन का पूरा विवरण आ गया। इस कवयित्री की यह देन इतिहास में अमर रहेगी। इन्होंने मीरा पर भी बहुत अच्छा काव्य लिखा है। इनके अनेक अन्य काव्य भी प्रसिद्ध है। वर्तमान में भी **नलिनीशुक्ला** जैसी कवयित्रियाँ संस्कृत में कविता कर रही है। ४ जून, १९४० को जन्मी नलिनी आचार्य नरेन्द्रदेव महाविद्यालय कानपुर में प्राध्यापिका हैं। इनके **काव्यभावांजलि** पर उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी ने पुरस्कार भी दिया है।

इस विवरण में आधार के रूप में कुछ महिला साहित्यकारों का उल्लेख इस दृष्टि से किया गया है कि यथा समय इन पर विस्तार से विचार हो सके और इनके कृतित्त्व पर, यदि संभव हो, अनुसंधान हो सके। वैसे क्षमाराव पर विश्वविद्यालयों में अनुसंधान हुए हैं और वर्तमान संस्कृत साहित्य के इतिहासों में उनका विवरण भी है। इसके अतिरिक्त ऐसी महिला विदुषियों पर भी लिखा जाना आवश्यक है जिनकी कृतियां चाहे न मिलती हों किन्तु जिनका वैदुष्य प्रसिद्ध था। ऐसी ही एक विदुषी यमुना देवी शास्त्री थीं। स्व. कमलारत्नम् भी सुविदित रही हैं।

प्राचीन कवयित्रीयों में **सुभद्रा** भी रहीं जिनका उद्धरण बल्लभदेव की **सुभाषितावली** में भी है और राजशेखर के ग्रन्थों में भी, **फल्गुहस्तिनी** के दो पद्य सुभाषितावली में उद्धृत हैं यद्यपि उनमें से एक शार्ङ्गधरपद्धति में भी है। एक भर्तृहरिका हैं। १६वीं सदी में तजदूरनरेश रघुनाथ की सभा कवयित्री **मधुरावली** ने रघुनाथ की तेलुगु रामायण कथा का संस्कृतानुवाद किया था। यह चतुर्दशसर्गान्त तक उपलब्ध भी हैं जिसमें १५०० पद्य हैं। **रामभद्राम्बा** ने इन्हीं रघुनाथ पर जिनकी ये भी सभाकवि थीं **रघुनाथाभ्युदयकाव्य** लिखा है। मेवाड़ नरेश अमरसिंह महाराणा की रानी **देवकुमारिका** ने संग्रामसिंह के राज्याभिषेक के अवसर पर वैद्यनाथ प्रसाद प्रसिद्ध काव्य ५ प्रकरणों में १४२ पद्यों में लिखा था- (लगभग सन् १५१४ में) ऐसी सूचना मिली है। आधुनिक काल में बंगलोर की **राजम्मा** (जन्म १८७४) ने संस्कृत में **चन्द्रमौलि** उपन्यास लिखा। लक्ष्मी विजय महाकाव्य की प्रणेत्री **रमादेवी** की जानकारी भी मिलती है। केरल की **श्रीदेवी कुटीतंबुरटी** (१८८५-१९५०) जैसी कवयित्रियों के भाषापरिणय चम्पू चम्पूभागवतम् नैषधनाटकम्, **मथुरापुरीविलासखंडकाव्यम्** जैसे ग्रन्थों की जानकारी भी उपलब्ध है। मैसूर की सुन्दरबल्ली (जन्म १८००) की **रामायण चम्पू, कोटिककोट** (केरल) की मनोरमा तंबुराटी (१७६०-१८२८) का पत्र साहित्य आदि के उल्लेख भी मिलते हैं।